ज्ञानविविधा
कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-4.5
Vol.-3; Issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No.- 244-250
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. मेरली के पुन्नूस
सह आचार्य, हिंदी विभाग,
सेंट स्टीफेंस कॉलेज, उषवूर.

Corresponding Author :

डॉ. मेरली के पुन्नूस
सह आचार्य, हिंदी विभाग,
सेंट स्टीफेंस कॉलेज, उषवूर.

समकालीन हिंदी उपन्यासों में आदिवासी विमर्श

शोध सार -: समकालीन आदिवासी साहित्य के द्वारा आदिवासियों के अधिकारों की माँग आज ज़ोरों से की जा रही है। उनके साथ विकास के कारण हो रहे जुल्मों का पर्दाफाश साहित्य के द्वारा किया जा रहा है। उनके प्रतिरोध को शब्दबद्ध कर उन्हें न्याय दिलाने की पेशकश की जा रही है। साहित्य की तमाम विधाओं के ज़रिये उनके शोषण और विद्रोह को वाणी दी जा रही है। आदिवासी विमर्श को केंद्र में रख अनेक उपन्यास रचे जा रहे हैं। इन उपन्यासों के ज़रिए भारत के मूल निवासी आदिवासियों की सुरक्षा की गुहार की जा रही है। उन्हें शिक्षित कराके मुख्यधारा से जोड़ने की कोशिश की जा रही है।

बीज शब्द -: विमर्श, आदिवासी विमर्श,आदिवासी,समाज,स्त्री,संस्कृति, मुख्यधारा।

विषय-वस्तु -: विमर्श शब्द अंग्रेजी के (D। scourse) डिस्कोर्स शब्द का हिंदी समानार्थी शब्द है, जिसका अर्थ है – विचार – विमर्श, परिचर्चा, बहस, किसी मुद्दे पर गहराई के साथ सोचना आदि। आदिवासी शब्द के साथ विमर्श जुड़ने पर आदिवासी विमर्श का अर्थ होता है भारत के मूल निवासियों की समस्या, उनकी सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनैतिक स्थिति पर बहस करना। विकास के नाम पर उनके साथ हो रहे अन्याय का पर्दाफाश करना। उनकी संस्कृति से मुख्यधारा को अवगत कराके उसमें निहित मूल्यों को जगजाहिर करना। उनके गौरवमय इतिहास को उघाड़ने का कार्य आदिवासी विमर्श के द्वारा किया जा रहा है। उनके अनकहे -अनछुए पहलुओं को उकेरकर इस सच्चाई की ओर इशारा किया जा रहा है कि मुख्यधारा के समाज ने अपने इतिहास में उनकी उपेक्षा की है। उनके संघर्ष को वाणी नहीं दी है। आज वे अपने संघर्ष को वाणी देने का कार्य कर रहे हैं। इस सिलसिले में आदिवासी विमर्श की समर्थक रमणिका गुप्ता लिखती हैं कि –"इस चेतना के साथ ही अपने लोकसाहित्य की समृद्ध परम्परा को स्रोत बनाते हुए आदिवासियों ने समकालीन साहित्य की शुरुआत की। पाँच हज़ार वर्षों तक का विशाल इतिहास है उनके पास।

लोकगीतों -लोक कथाओं – वीर गाथाओं -पर्व -त्योंहारों के गीतों और अनुष्ठानों की महान परंपरा है,जिनमें उनका ही नहीं बल्कि पृथ्वी का इतिहास भी छिपा है। वे अब खोज रहे हैं अपना इतिहास।"[1] आदिवासी विमर्श के अन्तर्गत प्रकृति प्रेम, वन जीवों के स्तर पर सहअस्तित्व, जड़ी बूटियों का परंपरागत अनुभूत ज्ञान, सामूहिकता, भोलापन, ईमानदारी, सहनशीलता, श्रम का सम्मान, वर्चस्व का नकार जैसे अनेक तत्व मौजूद हैं।

आदिवासी विमर्श आदिवासी दर्शन पर आधारित है। आदिवासी दर्शन प्रकृतिवादी है। इस जगत में सजीव हो या निर्जीव, छोटा हो या बड़ा आदिवासियों के लिए सब समान है। तीर और कमान उनके संघर्ष और प्रतिरोध का प्रतीक रहे हैं तो आज वे कलम के ज़रिये अपनी पीड़ा के साथ -साथ अपने संघर्ष को शब्दबद्ध कर रहे हैं। अपने अधिकारों के लिए मुहिम छेड़ रहे हैं। अपने अस्तित्व एवं अपनी अस्मिता के लिए संघर्षरत हैं। समकालीन साहित्य विशेषकर समकालीन उपन्यासों द्वारा इसे उकेरने का कार्य किया जा रहा है। बरसों से सहते आ रहे शोषण के बावजूद भी अपनी नस्ल, भाषा, संस्कृति और जीवन शैली को जिलाए रखने की भरपूर कोशिश में लगे हुए हैं। शिक्षा हासिल कर साहित्य सृजन में शरीक हुए हैं। वे खुद को वनवासी या जंगली नहीं मानते, इस देश के मूल निवासी मानते हैं –" आदिवासी जन भारत के मूल निवासी हैं। भारतीय साहित्य परंपरा आज भी अपने आदिम रूप में उनके मध्य सुरक्षित है,क्योंकि वे पाश्चात्य विकृतियों के प्रभाव से मुक्त रहे हैं।"[2] उनके शोषण, समस्याओं को चित्रित करना मात्र उनकी रचनाधर्मिता का ध्येय नहीं है,बल्कि उसका हल ढूँढना और समाज में मानवीय गरिमा के साथ रहना भी है। समकालीन दौर में इन तमाम मुद्दों को समेटते हुए आदिवासी साहित्य रचा जा रहा है, उनकी बेहतर स्थिति के लिए रचनाकार प्रयासरत हैं। आदिवासी साहित्य द्वारा उनके प्रतिरोध को मुखर किया जा रहा है। आदिवादी जीवन, संस्कृति, परंपरा, इतिहास, शोषण, प्रतिरोध को दर्ज कर अनेक उपन्यास लिखे जा रहे हैं। उपन्यासों में जहाँ आदिवासी जनजीवन, उनकी लोक-संस्कृति, उनके रीति-रिवाज, परंपराएँ, धार्मिक-सामाजिक - विश्वास-अविश्वास, जादू-टोना, तंत्र-मंत्र, उत्सव, नृत्यगान आदि दृष्टिगोचर होते हैं वहीं उनके संघर्षपूर्ण जीवन, उनकी समस्याएँ, जल,जमीन और जंगल के लिए किये गए उनकी लड़ाई भी चित्रित है। 2000 के बाद आदिवासी जीवन को केंद्र में रखकर अनेक उपन्यास रचे गए।

1. पार (1994) -: वीरेंद्र जैन का उपन्यास है 'पार'। वीरेंद्र जैन का उपन्यास 'पार' बुंदेलखंड के आदिवासी जीवन को केंद्र में रखकर रचा गया है। उनका पहला उपन्यास डूब की पृष्ठभूमि बुंदेलखंड का गाँव है तो 'पार' की पृष्ठभूमि उसी अँचल का आदिवासी समाज है। पार मध्य प्रदेश और उत्तरप्रदेश के बुंदेलखंड सीमा पर स्थित बेतवा नदी के तट पर बाँध बाँधने के कारण डूब में आने वाले लडैई, चंदेई गाँव की जमीन और उससे जुड़ी पहाड़ी जीरोन खेरा के आदिवासी जनता की व्यथा है। पार की कथा आदिवासी खेरे जीरोन से प्रारंभ होती है। जीरोन के आदिवासियों को विकास परियोजनाओं की कोई जानकारी नहीं है। लेकिन उन्हें समझ में आ रहा है कि लोग उजड़ कर इधर-उधर भाग रहे हैं। उन्हें डर है कि कोई भागकर यहाँ आकर न बस जाए। साथ ही साथ उपन्यास में जीरोन के साथ-साथ लडैई को भी दर्शाया गया है। लडैई डूब क्षेत्र में आता है। सब लोग गाँव छोड़कर भाग निकलते हैं। वे मुरैना, चंदेरी आदि बाहरी कस्बों में बस गये हैं। अब गाँव में बची है केवल उनकी स्मृति। विस्थापितों की समस्या भी प्रस्तुत उपन्यास की प्रमुख समस्या है।

2. धार (1990) - : इस उपन्यास के द्वारा संजीव ने संथाल परगना के कोयला खदानों में काम करने वाले आदिवासियों के जीवन, उनकी पीड़ा और सेठ - ठेकेदारों, माफिया, गुण्डों द्वारा हो रहे उनके शोषण को संथाल आदिवासी युवती मैना के माध्यम से उघाड़ने का कार्य किया है। उपन्यास के केंद्र में संथाल परगने का बांसगड़ा गाँव और संथाल आदिवासी स्त्री मैना है। कोयला खदान में काम करके वहाँ के आदिवासी अपना जीवन गुजारते हैं। लेकिन शोषण और उत्पीड़न की वजह से वे अवैध कोयला खनन करने के लिए बाध्य हो जाते हैं। संथाल परगने का कोयला खदान आदिवासियों के मेहनत पर ही टिका हुआ है। लेकिन पूँजीपति महेंद्र बाबू-ठेकेदार, माफिया, पुलिस अधिकारी और

शासक वर्ग के कारण उनका जीवन आतंकित, अभावग्रस्त और असुरक्षित है। यहाँ तक कि मैना के पिता टेगर और उसका पति फोकल भी शोषकों के साथ मिले हुए हैं। मैना की तरह प्रतिरोधी और चेतना ग्रस्त पात्र है अविनाश शर्मा जो एक वामपंथी विचारक है और दोनों मिलकर आदिवासी समाज की भलाई के लिए कार्यरत हैं। उपन्यास के अंत में शोषकों के खिलाफ हुई लड़ाई में मैना की जान चली जाती है। वह अपने समाज के लिए अपनी जान तक गवा देती है।

3. काला पहाड़ (1999) – भगवानदास मोरवाल का उपन्यास काला पहाड़ देश में बढ़ते सांप्रदायिकता को व्यक्त करने वाला आदिवासी केंद्रित उपन्यास है। उपन्यास का कथानक हरियाणा, उत्तरप्रदेश और राजस्थान की सीमा पर स्थित मेवात है। यहाँ इस्लामधर्मी आदिवासी मेव, अल्पसंख्यक हिंदुओं के साथ शांति और सद्भावना के साथ अपना जीवन बिताते आ रहे हैं। स्वार्थी लोग सांप्रयदायिकता के नाम पर उनके मन में जहर घोल रहे हैं। काला पहाड़ की कथा अँचल विशेष की होने पर भी पूरे देश का प्रतिनिधित्व करती है। ग्रामीण अर्थ व्यवस्था का टूटना इस उपन्यास के द्वारा लेखक ने व्यक्त किया है। स्वार्थी राज- नेताओं द्वारा अधिकार में आने के लिए किस हद तक गिरते हैं इसका बेबाक चित्रण उपन्यास के ज़रिये किया है। उपन्यासकार ने उपन्यास के प्रमुख पात्र सलेमी के द्वारा अपने गाँव के गौरवमय अतीत और वर्तमान की पीड़ा को उकेरा है।

4. सावधान नीचे आग है (1986) -:संजीव का उपन्यास 'सावधान ! नीचे आग है'। उपन्यास झारखंड के धनबाद जिले के चन्दनपुर के कोयला खदान पर आधारित है। चन्दनपुर गाँव के लोग इस खदान की सजा भोग रहे हैं। प्राकृतिक संसाधनों की असिमित शोषण, विस्थापन, प्रदूषण आदि उपन्यास की प्रमुख समस्याएँ हैं। साथ ही वहाँ के श्रमिक वर्ग के शौषण और संकट की दास्तान बयान करता है यह उपन्यास। उपन्यास का शुरुआत ही जल प्लावन में धंस होते जा रहे खदान से होता है। खदान नीचे धंस रहा है और उस पर बसे श्रमिकों की चिंता किसी को नहीं है। सरकार, अधिकारी वर्ग मदद करने के लिए तैयार नहीं होते। अंत में सब की दर्दनान्मक मौत होती है। उपन्यास का प्रमुख पात्र उधम सिंह है जिसकी डायरी से उपन्यास आगे बढ़ता है। अन्य पत्रों में आशीष,मेवा, मंगतु, सोमारु आदि आते हैं।

5. जंगल जहाँ शुरु होता है (2000) - : इस उपन्यास में भारत - नेपाल की सीमा में स्थित चंपारण्य जिले के मिनी चंपल के नाम से जाने -जाने वाले आदिवासी थारु जाति का संघर्षमय जीवन चित्रित है जिसमें डाकुओं,पुलिस और राजनीतिज्ञों की आपसी मिलीभगत की वजह से थारु जनजाति का जीवन दुश्वार हो गया है।। कालीचरण एक थारु युवक है जो इस उपन्यास का प्रमुख पात्र है। पहले वह डाकुओं का विरोध करता था, लेकिन व्ययस्था से तंग आकर वह उपन्यास के अंत में डाकू बन जाता है। इस उपन्यास के मूल में आदिवासियों का शोषण, उत्पीड़न, गरीबी आदि है। लेखक के ज़रिये इस उपन्यास में आदिवासी जीवन के अनछुए – अनकहे पहलुओं को उजागर किया है। इस कृति को यू. के. साहित्य सम्मान से सम्मानित किया गया है।

6. काला पादरी (2002) -: तेजिंदर कृत काला पादरी में मध्यप्रदेश के सरगुजा क्षेत्र के आदिवासियों का चित्रण किया है। प्रमुख रुप से आदिवासी जाति की आर्थिक,राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक घटनाओं को केंद्र में रखकर यह उपन्यास लिखा गया है। जेम्स खाकहा, लूईसा, माइकिल टोप्पो, सोजोलिन मीज, सिस्टर अनास्तासिया, फादर मैथ्यूज आदि उपन्यास के पात्र हैं। तेजिंदर का 'काला पादरी' उपन्यास धर्मांतरण की समस्या पर आधारित है।

7. जो इतिहास में नहीं है (2010) -: इस उपन्यास के लेखक राकेश कुमार सिंह हैं। ईस्ट इंडिया कंपनी के शोषण के विरुद्ध झारखंड के आदिवासी संथाल द्वारा लड़ी लड़ाई (हूल) के ऐतिहासिक कथा को उन्होंने सीदों-कानू की कहानी के साथ चित्रित किया है। उपन्यास का विस्तार संथाल युवक हारिल मुरमू से होता है। अंग्रेजों के शोषणकारी नीतियों से आदिवासियों का विद्रोह उपन्यास का प्रमुख भाग होते हुए भी हारिल और लाली की प्रेम कथा को भी लेखक ने बड़े मार्मिकता से चित्रित किया है।

8. अल्मा कबूतरी (2000) -: मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' बुंदेलखंड की कबूतरी जनजाति पर लिखा

गया है। प्रस्तुत उपन्यास अट्ठारह अध्यायों में विभाजित है। उनकी संस्कृति,रीति - रिवाज के साथ अल्मा के ज़रिए आदिवासी जीवन के व्यथा को भी लेखिका ने चित्रित किया है। इस सिलसिले में सुप्रसिद्ध आलोचक गोपालराय लिखते हैं कि - "अल्मा कबूतरी में बुंदेलखंड क्षेत्र में रहने वाले 'कबूतरा' जाति के जीवन-यथार्थ का चित्रण किया है, जिन्हें औपनिवेशिक शासन ने जरायमपेशा' जाति घोषित कर न केवल तथाकथित 'सभ्य समाज की नज़रों में उपेक्षा और घृणा का पात्र वरन् पुलिस के अत्याचार का नरम चारा भी बना दिया था। " 3 उपन्यास में मुख्यत: दो समाजों को चित्रित किया है। पहला आदिवासी कबूतरा समाज, दूसरा सभ्य समाज जिसे कबूतरा जाति के लोग अपनी भाषा में 'कज्जा कहते हैं। आदिवासी कबूतरा जाति के प्रतिनिधि पात्रों में कदंबाई, भूरी, अल्मा, राणा, रामसिंह, सरमन, दूलन आदि आते हैं तो सभ्य समाज के प्रतिनिधि पात्रों में मंसाराम, जोधा, केहर सिंह, धीरज, सूरजभान, श्री रमाशास्त्री आदि हैं।

9. पिछले पन्ने की औरतें (2009) -: यह शरद सिंह का उपन्यास है। इस उपन्यास के द्वारा उपन्यासकार ने बेड़िया जनजाति की स्त्रियों के त्रासद जीवन को उघाड़ने का कार्य किया है। शारद सिंह द्वारा लिखे गए इस उपन्यास में मध्यप्रदेश के पथरिया, लिधोराया, फतेफुर, बीजावर, देवेन्द्र नगर आदि गाँवों का चित्रण हुआ है। यहाँ बेड़िया समाज बसता है। बेड़िया समाज के मुख्य आय का स्रोत वहाँ की महिलायें होती हैं, जिन्हें बेड़नी कहकर पुकारते हैं। ये बेडनियाँ नाचकर और देह व्यापार के धंधे में रहकर अपने परिवार का भरण-पोषण करती हैं। उनके नृत्य को राय नृत्य कहा जाता है। जो औरतें बेडनियाँ नहीं बनती, राई नृत्य या देह धंधे में भाग नहीं लेती वे चौर्य कला सीखकर चोरी का काम करती हैं। उपन्यास के प्रमुख पात्रों में लेखिका खुद है क्योंकि यह एक शोधपरक उपन्यास है। लेखिका के अलावा अनेक स्त्री पात्र हैं, जैसे - श्यामा, नचनारी, चंदाभाई, फुलवा, गुड्डी आदि।

10. मरंगगोडा नीलकंठ हुआ (2012) -: यह महुआ मांझी का उपन्यास है। इसमें महुआ मांझी ने विकास के जाल में फंसे हो और असुर आदिवासियों के जीवन को उकेरा है साथ ही उनकी संस्कृति को भी पर्त दर पर्त उजागर किया है। उपन्यास के ज़रिये लेखिका जीवंतता के साथ प्रस्तुत करती हैं कि कैसे विकास जनजाति के नाश का कारण बनता है। इस उपन्यास का मुख्य पात्र है सगेन और उसके दादा ततंग यानी जाम्बीरा। सम्पूर्ण उपन्यास इनके चारों ओर घूमता है। सांरडा और मरंग गोंडा में कंपनियों के आने से वहाँ के स्थानीय लोगों का फायदे से ज्यादा नुकसान होता है। विकास योजनाओं के चलते उनकी जमीन छीन ली जाती है। लुगूरी में बने युरेनियम खदानों से पर्यावरण और जमीन विषमय बन जाता है। सगेन,युरेनियम खदानों से होने वाले हानिकारक दुष्प्रभाव, रेडियो धार्मिता को समझाने का प्रयास करता है। इस उपन्यास में भी आदिवासी संस्कृति को बड़े जीवंतता के साथ चित्रित किया गया है। उपन्यास में सगेन और जाम्बीरा के अलावा मेंजारी, चारीबा, प्रज्ञा, आदित्य श्री आदि आते हैं।

11. ग्लोबल गाँव के देवता (2009) -: इस उपन्यास के लेखक रणेन्द्र हैं। ग्लोबल गाँव के देवता उपन्यास में असुर आदिवासियों के जीवन संघर्ष को सच्चाई के साथ उकेरा गया है। इस उपन्यास में झारखंड के गुमला, लोहरदग्गा, पलामू और लातेहार के आदिवासी समुदाय की व्यथा- कथा चित्रित है। कोयला खदान से भरपूर भौंरापाट बाक्साइट खान का इलाका है। वहाँ असुर जनजातियों की बच्चियों को पढ़ाने के लिए गर्ल्स रेज़िडेन्शल स्कूल में विज्ञान शिक्षक के रूप में इस उपन्यास के कथानायक की नियुक्ति होती है और आगे असुरों द्वारा किये गए संघर्ष में कथा तब्दील हो जाती है। पहले वह यहाँ नौकरी नहीं करना चाहता था,लेकिन जैसे ही वह इन आदिम समुदायों के संपर्क में आता है तब से उसके मन में इन्हें लेकर जो पूर्वाग्रस्त सोच मौजूद है उसमें बदलाव आता है। उपन्यास के मुख्य पात्र में स्वयं लेखक हैं। अन्य पात्रों में लालचन दादा, रुमझुम,ललिता,रामकुमार आदि भी हैं।विकास की परियोजनायें किस कद्दर जनजातियों के विपक्ष में खड़ी हैं इस यथार्थ का लेखक ने पाठकों के सामने पर्दाफाश किया है।

12. गगन घटा घहरानी (2015) – इस उपन्यास में लेखक ने बिहार के पलामू में रहने वाले उराँव आदिवासी समाज

की कथा को वाणी दी है। लघुंगा, खजूरी और सोनाहातू गाँव के उराँव आदिवासियों और सदानों की जो सहज शांत दुनिया बसी है, उस पर जगधारी राय और उसके पालतू चीते का आंतक हावी है। उपन्यास के मुख्य पात्र जागो, राय ठाकुर के यहाँ सेवक बनकर अपना जीवन गुजार रहा है। उपन्यास के अन्य पात्रों में फूलमती, बिफनी, सोनाराम आदि हैं। इनमें सोनाराम चेतना से भरा पात्र है और अन्याय एवं शोषण के प्रति अपनी आवाज़ बुलंद करता है।

13.गायब होता देश (2014) -: रणेंद्र का उपन्यास है गायब होता देश। कोरपेरेट पूँजी अपनी ताकत से देश को किस तरह बदल रहा है इसका सटीक चित्रण उपन्यास में मिलता है। मुख्य पात्रों में किशन विद्रोही, सोमेश्वर मुंडा, सोनामानी दी, अनुजा, नीरज आदि आते हैं। सोमेश्वर मुंडा के ज़रिए, मुड़ाओं का इतिहास,उनकी अस्मिता का पता चलता है तो किशन विद्रोही कोरपेरेट-राजनेता- मीडिया आदि की पोल खोलता है।

14. माटी माटी अरकाटी (2016) -: अश्विनी कुमार पंकज का उपन्यास है माटी माटी अरकाटी। ब्रिटिश उपनिवेश दौर में झारखंड से मॉरिशस के बाहर ले जाए गए गिरमिटिया आदिवासी मजदूरों की करुण गाथा है प्रस्तुत उपन्यास। श्रम के लिए भारत से ले जाए गए उन की दासतान बयान करता है यह उपन्यास, जिन में सिर्फ आदिवासी ही नहीं बल्कि हर समाज के लोग मौजूद हैं। विस्थापन की पीड़ा उपन्यास की मुख्य समस्या है। प्रमुख पात्रों में कोंता और कुंती है जो कोंता की पत्नी है। अन्य पात्रों में फुलवारिया, मुनिया, फोगल, जीतन, बुधु, पुरुलिया आदि हैं। इनके साथ मॉरिशस में गुलामों से भी बद्दतर व्यवहार किया जाता है। स्त्रियों के साथ बदसलूकी की जाती है।

15. ऑपरेशन महिषासुर (2019) -: राकेश कुमार सिंह का उपन्यास है 'ऑपरेशन महिषासुर'। उपन्यास के केंद्र में महेश असुर है जो कि एक शिक्षित युवक है। वह अपनी जड़े ढूंढ़ते हुए गजलीगोठरी आता है, वहाँ उसकी मुलाकात अपने दोस्त सोनारा मुंडा से होती है जो कि शिक्षक है। उस गाँव में स्थित है टारमो इस्पात जो एक कंपनी है और आदिवासियों की ज़मीन छीनकर उन्हें विस्थापित करते जा रही है। महेश असुर इस कंपनी के खिलाफ लड़ाई लड़ता है। महेश, सरकार, उद्योगपति, अधिकारी वर्ग सब के लिए चुनौती बनता है। वह झारखंड बंधु प्रतिरोध संगठन का संस्थापक है। उपन्यास में महेश असुर के अलावा मकरुआर, सोनारा मुंडा, नीलामणी एक्का आदि भी हैं।

16. लौटते हुए (2005) -: लौटते हुए वाल्टर भेंगरा तरुण का उपन्यास है। इस उपन्यास के द्वारा वाल्टर भेंगरा तरुण ने उपभोक्तावादी संस्कृति के षड्यंत्र को पर्त -दर- पर्त उघाड़ा है। इस उपन्यास की नायिका सलेमी है। सलेमी नौकरी केलिए शहर में जाती है लेकिन वहाँ उसे शोषण का शिकार होना पड़ता है। वह अपने गाँव लौटकर अपनी बाकी जिन्दगी बसर करना चाहती है विशेषकर अपनी संस्कृति की ओर वापस लौटना चाहती है जहाँ शोषण के लिए कोई गुंजाईश नहीं है। हरिराम मीणा इस उपन्यास के संदर्भ में लिखते हैं - "इस कृति में झारखंड अंचल की ऐसी महिलाओं के दुख व शोषण को अभिव्यक्ति दी गयी है जिन्हें रोजगार की तलाश में दूरस्थ महानगरों एवं अन्य राज्यों की ओर पलायन करना पड़ता है।"[4] यह मात्र सलेमी की कहानी नहीं है,ऐसी हज़ारों आदिवासी लडकियाँ हैं जो नौकरी की तलाश में गाँव छोडकर शहर जाती हैं और वहाँ पुरुषों के हवस का शिकार बनकर दर -दर की ठोकरें खाने को अभिशप्त हो जाती हैं। उपन्यास की मुख्य पात्र सलेमी है और अन्य पात्रों में मार्था, अंजलों, फरन दा आदि आते हैं।

17. हुल पहाड़िया (**2014**) -: राकेश कुमार सिंह का उपन्यास है हुल पहाड़िया। यह पहाड़िया जनजाति के इतिहास की गाथा है। इसमें आदिवासियों के क्रांतिकारी नेता तिलका मांझी की समरगाथा का बखान किया है। ऐतिहासिक रूप से इस उपन्यास का अपना महत्व है। पहाड़िया समाज द्वारा अंग्रेजों के खिलाफ की गई लड़ाई को इसमें वाणी दी है। साथ ही साथ आदिवासी समाज और संस्कृति को भी यथावत चित्रित करने का प्रयास किया है। उपन्यास के मुख्य पात्रों में जबरा पहाड़िया अर्थात तिलका मांझी, रानी सर्वेश्वरी, फागुन, कुंजरा, जंगी, और गुमना को देख सकते हैं। गौण पात्रों में क्लीवलैंड, चैती, झूमर, मनसुख पहाड़िया, हरिया आदि आते हैं।

18. धूणी तपे तीर (2008) – हरीराम मीणा का लिखा उपन्यास 'धूणी तपे तीर' ऐतिहासिक दृष्टि से अपना महत्व

रखता है। इस उपन्यास का नायक आदिवासी जन नायक गोविंद गुरु है। गोविन्द गुरु द्वारा जगह – जगह घूमकर आदिवासी समाज को जाग्रत करने का कार्य किया जाता है। अपने अधिकारों के जंग के लिए तैयार करता है। प्रस्तुत उपन्यास में ब्रिटिश समांतवादी ताकतों से लड़ने वाले आदिवासी जनजातियों के इतिहास को दर्शाया गया है।यह उपन्यास राजयस्थान के बाँसवाड़ा जिले के मानग़ढ़ में हुए आदिवासियों के जनसंहार को आधार बना कर लिखा गया है। उपन्यास की भूमिका में उपन्यासकार ने अपना मन्तव्य स्पष्ट करते हुए लिखा है-" स्पष्ट है कि मनुष्य हक की लड़ाई के इतिहास को मनुष्य-विरोधी शोषक-शासकों ने दबाया है और उनके आश्रय में पलनेवाले इतिहासकारों ने उसका साथ दिया है।"[5] धूणी तपे तीर उपन्यास इन सच्चाईयों का खुलासा करता है।

19. रेड ज़ोन (2015) - विनोद कुमार शुक्ल का 'रेड ज़ोन' उपन्यास विकास का गलत मॉडेल किस तरह आदिवासियों के नाश का कारण बनता है और राजनीति के खोखलेपन का खुलासा करता है। माओवाद अथवा नक्सलवाद की सच्चाई को लेखक ने इस रचना के ज़रिए उजागर किया है। अपनी जमीन और अधिकारों के लिए लड़नेवाले आदिवासियों को किस तरह नक्सलवाद के जंजाल में फँसाया जा रहा है,यह भी उपन्यास में दृष्टव्य है। उपन्यास के मुख्य पात्रों में कालीचरण, मानव, दुर्गा आदि प्रमुख हैं।

20. समर शेष है (2005) - विनोद कुमार ने 'समर शेष है' के माध्यम से झारखंड के आदियासियों पर हो रहे महाजनी शोषण और आदिवासियों के संघर्ष को सामने रखा है। यह उपन्यास महाजनी शोषण के खिलाफ वर्ग संघर्ष की दो पीढ़ियों की लंबी समर गाथा है। साथ ही साथ उपन्यास में इसके खिलाफ आदिवासियों के प्रतिरोध को भी वाणी दी है। इस उपन्यास के बारे में वीर भारत तलवार लिखते हैं -"समर शेष है हिन्दी का एक असाधारण राजनीतिक उपन्यास है। मुझे यह कहने में हिचक नहीं है कि झारखंड के आदिवासियों के बारे में लिखी गयी यह सबसे श्रेष्ठ कृति है।"[6] उपन्यास में सोबरन मांझी द्वारा शुरु किये विद्रोह को उनका ही बेटा शिबू सोरन आगे बढ़ाता है। उपन्यास के मुख्य पात्र शिबू सोरेन हैं। अन्य पात्रों में सोबरन मांझी, विष्टू साव, नंद साव, सोनामणी,रामेश्वरी,सालखन आदि हैं।

21. रेत (2013) - भगवानदास मोरवाल कृत 'रेत' में कंजर जनजाति का चित्रण हुआ है। वेश्या वृत्ती उनके जीवन का प्रमुख अंग है। रेत में उपन्यासकार ने कंजर जनजाति की संस्कृति और उनके जीवन को बड़ी मार्मिकता के साथ चित्रित किया है। इस समाज की स्त्रियों को दो स्तरों पर बाँट सकते हैं। पहली भाभी, दूसरी बुआ जिसे खिलावड़ी भी कह सकते हैं। भाभी उस स्त्री को कहा जाता है जिसका विवाह होता है और वह किसी पुरुष की पत्नी बनकर उसका घर - गृहस्थी संभालती है। बुआ उन स्त्रियों को कहते हैं जो अपनी मर्जी से देह व्यापार के पेशे में उतरकर अपना और परिवार का भरण-पोषण करते हैं। उपन्यास के पात्रों में कमला बुआ, रुक्मिणी, संतों, पिंकी, सावित्री मल्होत्रा, मुरली भाई आदि हैं।

22. अस्थिफूल (2019) - अल्पना मिश्रा का उपन्यास है। खुद लेखिका कहती है कि यह उपन्यास स्त्री और भूमि के शोषण - दोहन की सामाजिक, राजनीतिक प्रक्रिया को उधेड़ता है। इस उपन्यास की नायिकाएँ झारखंड के जंगलों से आती हैं। शहर में अपनी बहत्तर ज़िंदगी की कामना करते हुए आने पर भी उन्हें शोषण के दुष्चक्र से गुज़रना पड़ता है। मुख्य पात्रों में रानी सुंदरी, पलाश, इनारा आदि पात्रों को देख सकते हैं। उपन्यास में इनारा की शादी की जाती है, लेकिन असल में उसे पैसे देकर खरीदा गया है। हरियाणा के रसूखदार परिवार ही झारखंड से आदिवासी लड़कियों को कम पैसे में खरीदते हैं। शादी का कोई प्रमाण नहीं होता क्योंकि आदिवासी समाज के तौर- तरीके के हिसाब से ही यह शादी की जाती है। फिर उन्हें बेटा पैदा करने के लिए मजबूर किया जाता है। उस घर में उनकी ज़िंदगी नौकरानियों से भी गई - गुजरी होती है।

निष्कर्ष -: आदिवासी विमर्श के ज़रिये आदिवासियों की समस्या पर बहस करने के साथ -साथ उनकी समस्या का हल भी ढूंढा जा रहा है। उनके गौरवमय इतिहास को उजाकर कर आज़ादी के लिए किये गए संघर्ष में उनकी भूमिका को

उघाडा जा रहा है। उनकी संस्कृति में निहित मूल्यों को अपनाकर एक आदर्श राष्ट्र के निर्माण की पहल की जा रही है। उनके दुःख – दर्द के साथ -साथ उनके विद्रोह को भी उकेरा जा रहा है। प्रकृति के बचाव में रची गई उनकी संस्कृति को एक आदर्श संस्कृति के मिसाल के तौर पर प्रस्तुत कर दुनिया में समरसता की स्थापना की दिशा में पहल की जा रही है।

संदर्भ ग्रंथसूची -:

1. रमणिका गुप्ता (सं) – आदिवासी साहित्य यात्रा – पृ:7
2. केशव कुमार – आदिवासी एवं उपेक्षित जन – पृ:53
3. गोपाल राय- हिन्दी उपन्यास का इतिहास-पृ:430
4. हरिराम मीणा-आदिवासी दुनिया – पृ: 217
5. हरिराम मीणा - धूणी तपे तीर – पृ: 21
6. सं डॉ एम. फिरोज खान् /डॉ शरगुप्ता नियाज़- साहित्य के आईने में आदिवासी विमर्श – पृ:107

•